ISSN 2249-829X

संस्कृति-सौरभम् शोध पत्रिका

प्रकाशक

संस्कार–भारती मानव कल्याण संस्थान जयपुर (राज.)

वी–23, भूरापटेल नगर, पोस्ट–हीरापुरा, अजमेर रोड़, जयपुर (राज.) 302021

E-mail : sanskritisaurabham@gmail.com, sbmksj2001@gmail.com

Scanned with CamScanner

प्रकाशन वर्ष जुलाई–दिसम्बर 2018
अंङ्क - द्वादश

RNI No. RAJBIL/2013/49485
Reg. No. - ISSN 2249-829X

संस्कृति–सौरभम् शोध पत्रिका

(National Research Journal)

अर्द्धवार्षिक पत्रिका

(हिन्दी, संस्कृत एवं अंग्रेजी भाषा में प्रकाशित लेख)

संरक्षक
प्रो. मोहनलाल शर्मा
व्याकरणविभागाध्यक्ष
राज. महा. आ. संस्कृत कॉलेज, गाँधीनगर, जयपुर (राज.)

प्रधान–सम्पादक
डॉ. एल.एन. शास्त्री
प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष (न्यायदर्शन –विभाग)
राजकीय महाराजा आचार्य संस्कृत महाविद्यालय, गाँधीनगर, जयपुर

सम्पादक एवं निदेशक (वित्त)
रवि शर्मा
(संस्कृति सौरभम्, शोध पत्रिका)

सहसम्पादक
डॉ.जे.एन.विजय
निदेशक,
राज. संस्कृत अकादमी, जयपुर

निदेशक
श्रीमती सुधा शर्मा
संस्कृति सौरभम्, शोध पत्रिका
जयपुर (राज.)

समन्वयक
डॉ. सूरजमल राव
उपकुल सचिव, (शोध)
महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर

प्रकाशक
संस्कार–भारती मानव कल्याण संस्थान जयपुर (राज.)
बी–23, भूरा पटेल नगर, पो. हीरापुरा, अजमेर रोड, जयपुर–302021
दूरभाष : +91–9414228995, 9929358713, 9414074305
E-mail : sanskritisaurabham@gmail.com, sbmksj2001@gmail.com
सदस्यताशुल्क –पञ्चवर्षीय 1300/– रु. स्थायी शुल्क 2100/– रु. उक्त राशि निदेशक – संस्कृति सौरभम् शोध पत्रिका के नाम नगद/चैक/ड्राफ्ट द्वारा प्रेषित करें। पत्रिका का खाता पंजाब नेशनल बैंक, न्यू सांगानेर रोड, सोडाला शाखा, जयपुर खाता सं. **4087000100105336** एवं **IFSC Cod PUNB0408700** है।

Scanned with CamScanner

रसगंगाधर में ध्वनि के उदाहरणों में छन्दो–विमर्श

शब्दशक्तिमूलकध्वनि

अबलानां श्रियं हृत्वा वारिवाहैः सहानिशम्।
तिष्ठन्ति चपला यत्र स कालः समुपस्थितः।।[1]

अर्थ – जिस समय में विद्युल्लतायें रमणियों की कान्ति का अपहरण करके रात दिन मेघों के साथ रहा करती है वह वर्षा समय उपस्थित हो गया।

प्रस्तुत पद्य में **अनुष्टुप् छन्द** है।

चांचल्ययोगिनयनं तव जलजानां श्रियं हरतु।
विपिनेऽति चंचलानामपि च मृगाणां कथं हरति।।[2]

अर्थ – साधारण चञ्चलतारूपगुण से युक्त तेरा नेत्र, सर्वथा उस गुण से हीन कमलों की शोभा तिरस्कार करे यह कोई आश्चर्य की बात नहीं। पर अत्यधिक अर्थात् तुम्हारी आँखों से भी अधिक, चञ्चलता गुणशाली मृगों की शोभा का भी जो तेरा नेत्र तिरस्कार करता है वह अत्यन्त आश्चर्य की बात है।

प्रस्तुत पद्य में **गीति छन्द** है।

शब्दशक्तिमूलक अलंकार ध्वनि

करतलनिर्गलदविरलदानजलोल्लासितावनीवलयः।
धनदाग्रमहितमूर्तिर्जयतितरां सार्वभौमो ऽयम्।।[3]

रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 32
वही, पृ. सं. 33
रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 70

Scanned with CamScanner

अर्थ – हाथ से गिरते हुए सतत 'दान' – संकल्प के जल से समस्त भूमण्डल को आनन्दमग्न कर देने वाला तथा धन–दायकों में सर्वप्रथम पूजित मूर्तिवाला, यह चक्रवर्ती राजा सबसे उत्कृष्ट है। यह वाच्य अर्थ है। इसके अतिरिक्त यहाँ व्यंग्य अर्थ भी है जैसे सूँड़ से निरन्तर चूते हुए मद–जल से पृथ्वीमण्डल को आनन्दित करने वाला तथा धनद–कुबेर के आगे प्रशंसित स्वरूप वाला यह सार्वभौम (दिग्गज) सर्वोत्कृष्ट है।

प्रस्तुत पद्य राजा के प्रकरण में कहा गया है अतः उसमें उक्त कर, दान, धनद और सार्वभौम पदों की अभिधा क्रमशः हाथ, वितरण, दाता और चक्रवर्ती राजारूप अर्थों में, प्रकरण के द्वारा नियन्त्रित हो जाती है जिससे राजपक्षीय अर्थ ही वाच्य होता है परन्तु वाच्यार्थ बोध के बाद शब्दशक्तिमूलक व्यंजना से पूर्वोक्त दिग्गज अथवा इन्द्र–पक्ष का अर्थ भी ज्ञात होता है। यहाँ उपमा अलंकार व्यंग्य है।

प्रस्तुत पद्य में **आर्या छन्द** है।

शब्दशक्तिमूलक वस्तु ध्वनि–

राज्ञो मत्प्रतिकूलान्मे महयमुपस्थितम्।
बाले! वारय पान्थस्य वासदानविधानतः।।[1]

अर्थ – युवावस्था के प्रथम सोपान पर पग रखने वाली सुन्दरि! राजा मुझ से सर्वथा विरुद्ध है अतः उससे महान् भय उपस्थित हो गया है मैं एक पथिक हूँ यहाँ मेरा कोई रक्षक नहीं अतः तुम अपने यहाँ जगह देकर उस भय से मुझे बचाओ। (यह वाच्य रूप अर्थ है) व्यंग्यार्थ का अभिप्राय यह हुआ कि यह चन्द्र, चिरविरही अतएव नितान्त उत्कण्ठित मुझको उद्विग्न कर रहा है अतः संभोग का अवसर दो। यह व्यंग्य अर्थ उक्त वाच्य अर्थ से अधिक चमत्कारी है अतः प्रधान है। इस व्यंग्य के आधार पर यह पद्य 'ध्वनि' कहलाने योग्य है।

1 वही, पृ. सं. 87

Scanned with CamScanner

प्रस्तुत पद्य में अनुष्टुप् छन्द है।

अर्थशक्तिमूलक ध्वनि

स्वतः संभवी वस्तु से वस्तु ध्वनि का उदाहरण –

गुञ्जन्ति मञ्जुपरितो गत्वा धावन्ति संमुखम्।
आवर्तन्ते विवर्तन्ते सरसीषु मधुव्रताः।।[1]

अर्थ – मधुव्रत जिन्होंने केवल मधु–पान करने का व्रत ले रखा है अर्थात् भ्रमर चारों तरफ मनोहर गुञ्जन कर रहे हैं दूर जाकर फिर उसी तरफ दौड़ रहे हैं इस तरह बार–बार सरोवरों में आते और जाते हैं।

उक्त पद्य में अभिधा के द्वारा जो भ्रमरों के गुञ्जन आदि वर्णित हुए हैं सबके सब स्वतः सम्भवी संसार में स्वाभाविक रूप से होने वाले हैं। उन वस्तुओं से पहले यह व्यक्त होता है कि अब सरोवरों में कमलों की उत्पत्ति होने वाली है – निकट है और इस व्यंग्य के द्वारा बाद में यह ध्वनित होता है कि शरद् ऋतु का आगमन अब निकट है।

प्रस्तुत पद्य में अनुष्टुप् छन्द है।

स्वतः संभवी वस्तु से अलंकार ध्वनि का उदाहरण –

मृद्वीका रसिता सिता समशिता स्फीतं निपीतं पयः
स्वर्यातेन सुधाऽप्यधायि कतिधा रम्भाधरः खण्डितः।
तत्त्वं ब्रूहि मदीयजीव! भवता भूयो भवे भ्राम्यता
कृष्णेत्यक्षरयोरयं मधुरिमोद्गारः क्वचित्लक्षितः।।[2]

रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 93
वही, पृ. सं. 98

Scanned with CamScanner

अर्थ – हे मेरे जीव! तू ने बार–बार स्वर्ग से इहलोक तक का चक्कर लगाया है इस भ्रमण के प्रसंग में तू ने अनेक आस्वाद्य पदार्थों के आस्वादन किए इस लोक में दाख को खाया, चीनी की चासनी ली, दूध का यथेच्छ पान किया और स्वर्ग जाकर पीयूष का पान भी किया एवं अनेक प्रकार से रम्भा के अधरों को भी काटा। अब कृष्णनाम की माधुरी का भी तू आस्वादन कर रहा है इसलिये मैं तुझ से पूछता हूँ सच सच कहना – 'कृष्ण' इन दो अक्षरों में जैसा माधुर्योद्गार है वैसा माधुर्योद्गार कहीं अन्यत्र ज्ञात हुआ? मेरा विश्वास है कि वह माधुरी तुझे अन्यत्र कहीं नहीं मिली होगी।

यहाँ स्वतः संभवी सत्य कविकल्पित नहीं व्यंजक अर्थ है और व्यंग्य है अतिशयोक्ति अलंकार।

प्रस्तुत पद्य में **शार्दूलविक्रीडित छन्द** है। शोभित होने का कारण पादों के प्रथम अक्षरों के आकार युक्त (मृद्वीका) और पादान्त वर्णों के विसर्ग युक्त होने के कारण शार्दूलविक्रीडित छन्द अपूर्व ओजस्वी लग रहा है।

न मनागपि राहुरोधशंका न कलाधिगमो न पाण्डुभावः।
उपचीयत एव कापि शोभा परितो भामिनि! ते मुखस्य नित्यम्।।[1]

अर्थ – हे सुन्दरि! तेरे मुख की कोई शोभा सब तरह से सदा बढ़ती ही रहती है। इस मुख में न तो राहु के आक्रमण का थोड़ा भी भय है न कला का सम्बन्ध है और न पाण्डुरता है। इसमें राहुरोधशंकाभावादि निरपेक्षवस्तु से वस्तु व्यतिरेकालंकार व्यंग्य है।

प्रस्तुत पद्य में **मालभारिणी छन्द** है।

स्वतः संभवी अलंकार से वस्तु ध्वनि का उदाहरण

नदन्ति मददन्तिनः परिलसन्ति वाजिव्रजाः,
पठन्ति विरुदावलीमहितमन्दिरे वन्दिनः।

1 रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 105

Scanned with CamScanner

इदं तदवधि प्रभो! यदवधि प्रवृद्धा न ते,
युगान्तदहनोपमा नयनकोणशोणद्युतिः।।[1]

अर्थ – हे प्रभो! आपके शत्रुओं के भवन में मदमत्त गज चीत्कार करते हैं, अश्वों की श्रेणियाँ शोभित होती हैं और बंदीजन विरुदावली पढ़ते हैं परन्तु ये सब तब तक हैं जब तक प्रलय कालिक अग्नि–शिखा के समान आपके नेत्र कोण की अरुण आभा नहीं बढ़ी है।

इस पद्य में 'प्रलयकालिक अग्नि–शिखा के समान नेत्रकोण की अरुण आभा' यह जो वाच्य उपमा अलंकार है। उससे यह वस्तु व्यंग्य होती है कि 'अभी आपके हृदय में क्रोध का उदय होगा तभी शत्रुओं की सारी सम्पत्तियाँ भस्म हो जायेंगी।'

प्रस्तुत पद्य में **पृथ्वी छन्द** है। यहाँ असमसित पदावली के कारण पृथ्वी छन्द शोभित हो रहा है।

स्वतः संभवी अलंकार से अलंकार ध्वनि का उदाहरण –

उदितं मण्डलमिन्दो रुदितं सद्यो वियोगिवर्गेण।
मुदितं च सकललललनाचूडामणिशासनेन मदनेन।।[2]

अर्थ – ज्यों ही चन्द्रमण्डल का उदय हुआ त्योंहि विरही और विरहिणियों का ल रो उठा तथा सभी कामिनियों पर शासन करने वाला कामदेव खिल उठा – उसने सन्नता का अनुभव किया।

उक्त पद्य में उदित होना, रोना और मुदित होना इन तीन क्रियाओं का एक थ होना समुच्चयालंकार कहलाता है। जो स्वतः सम्भवी वाच्य है उससे र्य–कारण–पौर्वापर्य–विपर्ययरूप अतिशयोक्ति अलंकार व्यंग्य होता है अर्थात् यहाँ जो र्थ वर्णित हैं उनमें चन्द्रोदय कारण है और रोना आदि कार्य, अतः चन्द्रोदय की

---

1. वही, पृ. सं. 105
2. रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 108

Scanned with CamScanner

प्रथमता और रोदन आदि की पश्चाद्भाविता निश्चित है परन्तु यहाँ उन सबों के साथ–साथ होने का वर्णन किया गया है यह एक प्रकार की अतिशयोक्ति है।

प्रस्तुत पद्य में **गीति छन्द** है।

कवि प्रौढोक्ति सिद्ध वस्तु से वस्तु ध्वनि का उदाहरण –

तदवधि कुशली पुराणशास्त्रस्मृतिशतचारुविचारजो विवेकः।
यदवधि न पदं दधाति चित्ते हरिणकिशोरदृशो दृशोर्विलासः।।[1]

अर्थ – सैकड़ों पुराणों, शास्त्रों तथा स्मृतियों के सुन्दर विचारों से उत्पन्न विवेक तभी तक सकुशल–अक्षुण्ण रहता है जब तक मृग–शावक–नयना नायिका के नयनों का विलास हृदय में स्थान ग्रहण नहीं करता।

'कामिनी का नयन–विलास जब हृदय में पैर रखता है तब विवेक का कुशल नहीं' यह जो वस्तु यहाँ वाच्य है वह कवि–कल्पनामात्र–प्रसूत है, वास्तविक नहीं।

प्रस्तुत पद्य में **औपच्छन्दसिक छन्द** है।

कवि प्रौढोक्ति सिद्ध अलंकार से वस्तु ध्वनि का उदाहरण –

देवाः के पूर्वदेवाः समिति मम नरः सन्ति के वा पुरस्ता–
देवं जल्पन्ति तावत्प्रतिभटपृतनावर्तिनः क्षत्रवीराः।
यावन्नायाति राजन्नयनविषयतामन्तकत्रासिमूर्ते!
मुग्धारि प्राणदुग्धाशनमसृणरुचिस्त्वत्कृपाणो भुजः।।[2]

अर्थ – हे यम के समान भयोत्पादक मूर्ति वाले राजन्! आपके शत्रु की सेना में रहने वाले क्षत्रिय–वीर 'युद्ध में मेरे सामने देव तथा दानव कौन होते हैं और ये मानव तो नितान्त ही तुच्छ हैं ' इस तरह की बहकी हुई बातें तभी तक बनाते हैं जब तक

1 रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 109
2 वही, पृ. सं. 111

Scanned with CamScanner

मोहग्रस्त शत्रु के प्राणरूप दुग्ध के पीने से चिकनी कान्तिवाला आपका खड्ग–भुज उनकी आँखों के समक्ष उपस्थित नहीं होता।

उक्त पद्य में कृपाण का भुजरूप नहीं हो सकने के कारण कवि कल्पित कृपाण तथा भुज के वाच्यरूपक से 'जब आप तलवार उठा लें तब शत्रुओं के जीने की क्या आशा है' यह वस्तु ध्वनित होती है या इसमें कविप्रौढोक्ति सिद्ध रूपक द्वारा आपके तलवार लेकर उद्यत हो जाने पर अन्य लोगों के जीवन की क्या आशा है ऐसी वस्तु व्यंजित हो रही है।

प्रस्तुत पद्य में **स्त्रग्धरा छन्द** है।

कवि प्रौढोक्ति सिद्ध वस्तु से अलंकार ध्वनि का उदाहरण –

साहचारसुरासुरावलिकराकृष्टभ्रमन्मन्दर–
क्षुभ्यत्क्षीरधिवल्गुवीचिवलयश्रीगर्वसर्वंकषाः।
तृष्णाताम्यदमन्दतापसकुलैः सानन्दमालोकिता
भूमीभूषण! भूषयन्ति भुवनाभोगं भवत्कीर्तयः।।[1]

अर्थ – हे पृथिवी भूषण! गर्वयुक्त देव–दानवों की पंक्ति के हाथों से खींचे हुए तएव घूमते हुए मन्दर पर्वत से क्षुब्ध किए जा रहे दुग्ध–सागर के सुन्दर तर–समूह शोभा के गर्व को समूल नष्ट कर देने वाली अर्थात् उससे भी सुन्दर और तृष्णा से पराये हुए अनेक तपस्वि–समूहों के द्वारा सहर्ष देखी गई आपकी कीर्तियाँ समस्त र को सुशोभित कर रही हैं।

उक्त पद्य में तृषातुर तपस्वियों के द्वारा कीर्ति का सहर्ष अवलोकन रूप में विकल्पितवस्तु वाच्यरूप में वर्णित हुई है जिससे तपस्वियों के हृदय में होने वाली नव भ्रान्ति ध्वनित होती है।
तक

[1] रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 112

Scanned with CamScanner

प्रस्तुत पद्य में **शार्दूलविक्रीडित छन्द** है। यहाँ समासगर्भा समसित पदावली होने से शार्दूलविक्रीडित छन्द शोभित हो रहा है।

कवि प्रौढोक्ति सिद्ध अलंकार से अलंकार ध्वनि का उदाहरण –

दयिते रदनत्विषां मिषादयि तेऽमी विलसन्ति केसराः।
अपि चालकवेषधारिणो मकरन्दस्पृहयालवोऽलयः।।[1]

अर्थ – हे प्रिये! तेरे दशन–किरण–व्याज से ये केसर शोभित हो रहे हैं और ह कच–कलाप का वेष धारण किए हुए ये पराग के लोभी भ्रमर हैं।

उक्त पद्य में दशन–किरण रूप उपमेय का निषेध करके केसररूप उपमान का स्थापन स्वरूप एक और कच–कलापरूप उपमेय का निषेध करके भ्रमररूप ती उपमान का स्थापन स्वरूप द्वितीय अपह्नुति अलंकार वाच्य है। उन दोनों अपह्नुति अ अलंकारों से नारी रूप उपमेय का निषेध करके कमलिनी रूप उपमान का स्थापनस्वरूप य तृतीय अपह्नुति अलंकार ध्वनित होता है।

प्रस्तुत पद्य में **वैतालीय छन्द** है।

उभयशक्त्युद्भव ध्वनि का उदाहरण –

रम्यहासा रसोल्लासारसिकालिनिषेविता।
सर्वाशोभासंभारापद्गिनी कस्य न प्रिया।।[2]

अर्थ – जिसका 'हास' सुन्दर है जिसमें 'रस' भरा है जो 'रसिकालि' से सेवित है और जिसके सब अशोभामय हैं वह पद्मिनी किसे प्रिय नहीं अर्थात् सर्वप्रिय होती है।

प्रस्तुत पद्य में **अनुष्टुप् छन्द** है।

---

1 वही, पृ. सं. 114
2 रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 117

Scanned with CamScanner

जहत्स्वार्थामूलक ध्वनि का उदाहरण –

कृतं त्वयोन्नतं कृत्यमर्जितं चामलं यशः।
यावज्जीवं सखे! तुभ्यं, दास्यामो निभृताशिषः।।[1]

अर्थ – हे सखे! तूने बहुत प्रशंसनीय कार्य किया है और निर्मल यश प्राप्त किया हम जब तक जीते रहेंगे तब तक तुझे अत्यधिक आशीर्वाद देंगे।

यहाँ किसी अपकार करने वाले मित्र के प्रति अपर मित्र के द्वारा कहा गया है उन्नत आदि पद के मुख्य अर्थ बाधित है। यहाँ हीन आदि अर्थ में लक्षणा करनी ी है ऐसी स्थिति में अर्थ हुआ कि 'तूने परम हीन कर्म किया है और अयश कमाया अतः हम यावज्जीवन तुझे शापित करेंगे' इस अर्थ में उन्नत आदि पद्योक्त पदों के य अर्थों का सम्बन्ध बिल्कुल नहीं है। अतः यह लक्षणा जहत्स्वार्था कहलाती है। 'तू संसार में सबसे नीच है' यही व्यंग्य लक्षणा का प्रयोजन है।

प्रस्तुत पद्य में अनुष्टुप् छन्द है।

अजहत्स्वार्था मूल ध्वनि का उदाहरण –

बधान द्रागेव द्रढिमरमणीयं परिकरम्
किरीटे बालेन्दुं नियमय पुनः पन्नगगणैः।
न कुर्यास्त्वं हेलामितरजनसाधारणधिया
जगन्नाथस्यायं सुरधुनि! समुद्धारसमयः।।[2]

अर्थ – हे सुरनदि! अन्य साधारण मनुष्यों के समान समझ कर मेरी अवहेलना न ना, यह जगन्नाथ के उद्धार का समय है अतः दृढ़ता के सुन्दर अर्थात् दृढतर तथा परिकर शीघ्र बाँध लो मेरे उद्धार के लिए कमर कस लो और किरीट वासी

---

1 वही, पृ. सं. 120
2 रसगंगाधर, द्वितीय आनन, भाग द्वितीय, पृ. सं. 121

Scanned with CamScanner

बालचन्द्र को सर्पसमूहों से पुनः स्थिर कर लो। अन्यथा कदाचित् वह हड़बड़ी में किरीट से दूर ना जा पड़े।

यहाँ जगन्नाथ पद का वाच्य अर्थ शुद्ध रूप में बाधित है, जिससे विविध पापकारी जगन्नाथात्मक व्यक्ति विशेषरूप अर्थ में जगन्नाथ पद की लक्षणा होती है और वह लक्षणाअजहत्स्वार्था कहलाती है क्योंकि उक्त लक्ष्य अर्थ में जगन्नाथ रूप मुख्य अर्थ का त्याग नहीं हुआ है। पापों का अन्य किसी पद से प्रतिपादन न किया जा सकना अर्थात् जगन्नाथ के पाप ऐसे हैं जिनका प्रतिपादन शब्दान्तर से हो ही नहीं सकता, इस अर्थ का बोध करना उक्त लक्षणा का प्रयोजन है और इस प्रयोजन का बोध व्यञ्जना से होता है।

प्रस्तुत पद्य में **शिखरिणी छन्द** है।

प्रो. अर्चना दुबे
श्रीसोमनाथ संस्कृत विश्वविद्यालय
राजेन्द्रभुवन रोड़, वेरावल
जिला गीर सोमनाथ, गुजरात 362265

:::::

Scanned with CamScanner